श्रृंखला – 5

शोधपरक् प्रगति विवरण –5

.....

(मेटाफिजिकल क्रम में समय/अन्तराल सम्बन्धी विविध विवेचना)

पूर्व 'शोध पत्र –4' में 'समय/काल' की संक्षिप्त विवेचना प्रामाणिक गंथों के आधार पर की गयी है। लेकिन उनके आरम्भिक ज्ञान/विज्ञान से व्यक्ति दैनिक जीवन से पूर्णतः भिज्ञ नहीं हो पाता है। विश्व के हर जाति/धर्म से जुडे व्यक्ति को 'जन्म – मृत्यु' के मध्य विविध कृत्यों से जुड़ने के लिए 'समय/काल' के विविध अंगों (दिन, मास, वर्ष, संवत आदि) की आवश्यकता पड़ती है। इन सबका सामूहिक क्रम हमें आवश्यकतानुसार विविध पंचांगों में मिलता है। लेकिन उसी जगह विविध पंचांगों में कहीं – कहीं प्रामाणिकता का अभाव भी किसी न किसी रूप में दीखता है। – यह सब सम्बन्धित विषय के विज्ञजनों के लिए नए सिरे से विचारणीय है।

'समय/काल' सम्बन्धी विवेचना से पूर्व विविध मानवपयोगी पंचांगों पर आवश्यक चर्चा/विचार कर लेना आवश्यक है। पंचांगों के संक्षिप्त विवरण को निम्न क्रम में प्रस्तुत किया जा सकता है –

'लोक जीवन के प्रयोग के लिए धार्मिक उत्सवों और ज्योतिषीय जानकारी हेतु बहुत पहले से ही 'दिन, मास और वर्ष आदि' के सम्बन्ध में जो ग्रंथ या विविध संग्रह बनता है उसे पंचांग या पंजिका या पंजी कहते हैं'।

भारत में ईसाई, पारसी, मुसलमान और हिन्दुओं द्वारा लगभग 30 –32 पंचांग व्यवहार में लाये जाते हैं। वर्तमान काल में हिन्दुओं द्वारा विविध प्रकार के पंचांगों का प्रयोग होता है। इनमें कतिपय पंचांग – 'सूर्यसिद्धान्त, आर्कसिद्धान्त और पाश्चात्यकालीन ग्रंथों (ग्रहलाघव) पर आधारित हैं।

इनमें कुछ पंचांग चैत्र (शुक्ल पक्ष, प्रतिपदा) और कुछ कार्तिक (शुक्ल पक्ष, प्रतिपदा) से आरम्भ होते हैं। कतिपय पंचांगों का आरम्भ स्थान आदि को लेकर निम्नक्रम में किया जाता है –

1.हलार प्रान्त (काठियावाड़) में वर्ष का आरम्भ आषाढ़ (शुक्ल पक्ष, प्रतिपदा) से होता है।

2. गुजरात और उत्तरी भारत (बंगाल के अतिरिक्त) में विक्रम संवत्, दक्षिण भारत में शक् संवत् तथा कश्मीर में लौकिक संवत् का व्यवहार होता है।

3. उत्तरी भारत और तेलंगाना में मास पूर्णिमान्त (पूर्णिमा से अन्त होने वाले) होते हैं।

4. बंगाल, महाराष्ट्र और दक्षिणी भारत में अमान्त (अमावस्या से अन्त होने वाले) होते हैं।

उपरोक्त क्रम का परिणाम यह होता है कि कुछ उपवास और उत्सव, जो भारत में सार्वभौम रूप में प्रचलित हैं, (यथा एकादशी और शिवरात्रि के उपवास और श्री कृणजन्म सम्बन्धी उत्सव) विभिन्न भागों में विभिन्न सम्प्रदायों द्वारा दो अलग दिनों में होते हैं। यही नहीं, बल्कि कुछ कृत्यों के दिनों में तो एक मास का अन्तर पड़ जाता है (यथा पूर्णिमान्त गणना से कोई उत्सव आश्विन कृष्ण पक्ष में हो सकता है तो वही भाद्रपद कृष्ण पक्ष 'अमान्त गणना के अनुसार' कहला सकता है और वही उत्सव एक मास उपरान्त मनाया जा सकता है)।

वर्तमान में यह विभ्रमता और बढ गयी है। कुछ पंचांग (यथा दृक् या दृक्प्रत्यय, जो नाविक पंचांग पर आधारित हैं) इस प्रकार व्यवस्थित हैं कि ग्रहण जैसी घटनाएं उसी प्रकार घटे जैसा कि लोग अपनी आंखों से देख लेते हैं । इस क्रम में दक्षिण भारत में बहुत सी पंजिकाएं हैं ।

तमिलनाडु में पंजिकाओं का दो प्रकार है – पहला दृक् गणित पर आधारित है और दूसरा वाक्य विधि (आर्यभट्ट पर आधारित मध्यकाल की गणनाएं) पर जो अपेक्षाकृत कम फल देती हैं। पुदुकोट्ठाई पंचांग (वाक्य विधि) उसी नाम वाले राजा द्वारा प्रकाशित होते हैं। श्रीरंगम पंचांग (वाक्य विधि) रामानुजीय वैष्णवों द्वारा व्यवहार में लाए जाते हैं, किन्तु माध्वों (वैष्णवों का एक सम्प्रदाय) के लिए एक अन्य पंचांग है। स्मार्तों द्वारा व्यवहृत कंजनूर पंचांग अत्यन्त प्रचलित है और वह वाक्य पंचांग है।

स्मार्त लोग शंकराचार्य के अधिकार से प्रकाशित दृक्पंचांग को व्यवहार में नहीं लाते। तेलगू लोग गणेश दैवज्ञ के ग्रहलाघव (सन् 1520) पर आधारित सिद्धान्त चन्द्र पंचांग का प्रयोग करते हैं। मलावार के लोग दृक् पंचांग का प्रयोग करते हैं किन्तु वह परहित नाम वाली मलावार पद्धति पर आधारित है न कि तमिलों द्वारा प्रयुक्त दृक् पंचांग पर। तेलगू लोग चन्द्र गणना स्वीकार करते हैं ओर चैत्र शुक्ल पक्ष से युगादि नामक वर्ष का आरम्भ मानते हैं। किन्तु तमिल सौर गणना के पक्षपाती हैं और अपने चैत्र का आरम्भ मेष विषुव से करते हैं, उनके व्रत और धार्मिक कृत्य जो तिथियों पर आधारित है , चान्द्रमान के अनुसार सम्पादित होते हैं। बंगाली लोग सौर मासों और चान्द्र दिनों का प्रयोग करते हैं, जो मलमास के मिलाने से त्रिवर्षीय अनुकूलन का परिचायक है।

सामान्यतः पंचांगों को लेकर निम्न तीन सिद्धान्त प्रचलन में हैं –

1.सूर्यसिद्धान्त – यह सिद्धान्त अपनी विशुद्धता को लेकर सारे भारत में प्रयुक्त है।

2. आर्यसिद्धान्त – यह सिद्धान्त त्रावणकोर, मलावार और कर्णाटक के माध्वों द्वारा मद्रास के तमिल जनपदों में प्रयुक्त है।

3. ब्राह्मसिद्धान्त – यह सिद्धान्त गुजरात और राजस्थान में प्रयुक्त है। यह सिद्धान्त प्रथम सिद्धान्त के पक्ष में समाप्त होता जा रहा है।

उपरोक्त सिद्धान्तों में महायुग से आरम्भ की गणनाएं की जाती हैं जो इतनी भारी भरकम हैं कि उनके आधार पर सीधे ढंग से पंचांग बनाना अत्यन्त कठिनसाध्य है। अतः सिद्धान्तों पर आधारित करण नामक ग्रंथों के आधार पर पंचांग निर्मित हाते हैं (यथा बंगाल में मकरन्द, गणेश का ग्रहलाघव)।

सिद्धान्तों के आपसी अन्तर के निम्न दो महत्वपूर्ण तत्व हैं–

1.वर्ष विस्तार के विषय में (वर्तमान का अन्तर केवल कुछ विपलों का है)।

2.कल्प या महायुग या युग में चन्द्र और ग्रहों की चक्र गतियों की संख्या के विषय में ।

आजकल का यूरोपीय पंचांग भी पूर्णतः संतोषजनक नहीं है। आरम्भिक क्रम में (ई0 पू0 46) में जुलिएस सीजर ने एक संशोधित पंचांग निर्मित किया और प्रति चौथे वर्ष 'लीप' वर्ष की व्यवस्था की। लेकिन उनकी गणनाएं ठीक नहीं उतरी, क्योंकि सन् 1552 में वासन्तिक विषुव 21 मार्च को न होकर 10 मार्च को हुआ।

पोप ग्रेगोरी (13वां) ने घोषित किया कि 4 अक्टूबर के उपरान्त 15 अक्टूबर होना चाहिए। इसी क्रम में उन्होने आगे कहा कि जब तक 400 से भाग न लग जाय तब तक शती वर्षों में 'लीप' वर्ष नहीं होना चाहिए (इस क्रम में 1700, 1800, 1900 ईसवियों में अतिरिक्त दिन नहीं होगा, वह केवल 2000 ई0 में होगा)। तब भी वह त्रुटि रह गयी, किन्तु 33 शतियों से अधिक वर्षों के उपरान्त ही एक दिन घटाया जायेगा। आधुनिक ज्योतिषशास्त्र की गणना से ग्रेगोरी वर्ष 26 सेकण्ड अधिक है।

सुधारवादी प्रोटेस्टेण्ड इंगलैंड ने सन् 1750 ई0 तक पोप ग्रेगोरी का सुधारवादी दृष्टिकोण नहीं माना, जब कि कानून बना कि 2 सितम्बर को 3 सितम्बर न मानकर 14 सितम्बर माना जाय। इसके उपरान्त भी यूरापीय पंचांग में दोष रह ही गया। इसमें मास में 28 से 31 तक दिन होते हैं, एक वर्ष के एक पाद में 90 से 92 दिन होते हैं, वर्ष के दोनों अर्धाशों (जनवरी से जून और जुलाई से दिसम्बर) में क्रम से 181या 182 और 184 दिन होते हैं। इस क्रम में मास में कर्म दिन 24 से 27 होते हैं तथा वर्ष और मास विभिन्न सप्ताह /दिनों से आरम्भ होते हैं। व्रतों का राजा ईस्टर सन् 1751 के उपरान्त 35 विभिन्न सप्ताह – दिनों में (22मार्च से 25 अप्रैल तक) पड़ा, क्योंकि वह (ईस्टर) 21 मार्च पर या उसके उपरान्त पड़ने वाली पूर्णिमा का प्रथम रविवार है।

(विशेष – उपरोक्त तथ्यात्मक प्रमाणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि यूरोपीय पंचांग किसी न किसी रूप में भारतीय पंचांगों की अपेक्षा अधिक दोषपूर्ण रहे हैं। भारतीय पंचांगों की मूल अवधारणा का तात्विक अवलोकन करने के उपरान्त ही यह कहना सार्थक होगा कि

यूरोपीय पंचांगों का क्रमिक क्रम भारतीय पंचांगों से कितना पीछे और समय/काल को लेकर दोषपूर्ण है।)

अधिकांशतः सभी देशों में समय/काल की मौलिक अवधियां (यथा दिन, मास, वर्ष, जिसमें ऋतुएं भी हैं) एक सी हैं। वर्ष युगों अथवा कालों के अंश या भाग होते हैं जो कालक्रमों और ऐतिहासिक संदर्भों में महत्वपूर्ण हैं। काल की अवधियां समान हैं, फिर भी मासों और वर्षों की व्यवस्था में दिनों के क्रम में अन्तर पाया जाता है। दिनों की अवधियां (उपभाग), दिन के आरम्भकाल, ऋतुओं और मासों में वर्षों का विभाजन, प्रत्येक मास और वर्ष में दिनों की संख्या तथा विभिन्न प्रकार के भागों में अन्तर पाया जाता है।

काल/समय का सबसे बड़ा मापक है – सूर्य और चन्द्र। धुरी पर पृथिवी के घूमने से दिन बनते हैं। मास प्रमुखतः चान्द्र अवस्थिति है तथा वर्ष सूर्य की प्रत्यक्ष्य गति है। अयनवृत्तीय वर्ष सूर्य के वासन्तिक विषुव से अग्रिम विषुव तक का काल है। अयनवृत्तीय वर्ष नक्षत्रीय वर्ष अर्थात् साइडरीयल वर्ष से अपेक्षाकृत छोटा है और यह कमी लगभग 20 मिनटों की है, क्योंकि वासन्तिक विषुव का बिन्दु प्रति वर्ष 50 सेकण्ड के रूप में पश्चिम ओर घूम जाता है।

पंचांग, सामान्यतः एक वर्ष के लिए बनता है। भारतीय पंचांग के निम्न पांच महत्वपूर्ण भाग हैं – तिथि, सप्ताह – दिन, नक्षत्र, योग और करण। पंचांग के इन पांचों विभाग की आवश्यक चर्चा संक्षेप में निम्न क्रम में की जा सकती है –

1.दिन– यह पंचांग का पहला अंग है। दोनों सूर्योदयों के बीच की काल अवधि अत्यन्त महत्वपूर्ण मानी जाती है। यह सौर दिन या लोकदिन है। दिन के दो अर्थ हैं – पहला – सूर्योदय से सूर्यास्त तक और दूसरा – सूर्योदय से सूर्योदय तक।

ऋग्वेद (6/9/1) में 'अहः' शब्द का दिन के कृष्ण भाग (रात्रि) और अर्जुन (चमकदार या श्वेत) भाग की ओर संकेत है। ऋग्वेद में रात्रि शब्द का प्रयोग उतना नहीं हुआ है जितना 'अहन्' का, किन्तु दिन का सामासिक प्रयोग अधिक हुआ है। ऋग्वेद (10/190/2) में 'अहोरात्र' (दिन – रात) का भी प्रयोग हुआ है।

(विशेष – 'अहोरात्र' को निम्न क्रम में व्याख्यायित किया जा सकता है –

यथा – 1. मनु (1/64) के अनुसार – 18 निमेष = 1 काष्ठा; 30 काष्ठा = 1 कला; 30 कला = 1 मुहूर्त; 30 मुहूर्त = 1 अहोरात्र। / 2. कौटिल्य (अर्थशास्त्र 2, अध्याय 20, पृ0 107 – 108)के अनुसार – 2 त्रुट = 1 लव, 2 लव = 1 निमेष, 5 निमेष = 1 काष्ठा, 30 काष्ठा = 1 कला, 40 कला = 1 नाड़िका, 2 नाड़िका = 1 मुहूर्त, 30 मुहूर्त = 1 अहोरात्र। / 3.वायु (50 /169, 57/7), मत्स्य (142 /4), विष्णु (2/8/59), ब्रह्माण्ड (2/29/6), शान्ति0 (232 / 12) के अनुसार – 15 निमेष = 1 काष्ठा, 30 काष्ठा = 1 कला, 40 कला = 1 नाड़िका, 2 नाड़िका = 1 मुहूर्त, 30 मुहूर्त = 1अहोरात्र / 4.

अमरकोश के अनुसार – 18 निमेष = 1 काष्ठा, 30 काष्ठा = 1 कला, 30 कला = 1 क्षण, 12 क्षण = 1मुहूर्त, 30 मुहूर्त = 1 अहोरात्र, / 5. भागवत (3/11/3–10) के अनुसार – 2 परमाणु = 1 अणु, 3 अणु = त्रसरेणु, 3 त्रसरेणु =1 त्रुटि, 100 त्रुटि = वैध, 3 वैध = 1 लव, 3 लव =1 निमेष, 3 निमेष =1क्षण, 5क्षण =1काष्ठा, 15काष्ठा = 1लघु, 15लघु =1नाड़िका, 2 नाड़िका = 1 मुहूर्त, 30 मुहूर्त = 1 अहोरात्र। / 6. आथर्वण ज्योतिष के अनुसार – 12 निमेष = 1 लव, 30लव = 1 कला, 30 कला = 1 त्रुटि, 30 त्रुटि = 1 मुहूर्त ।)

कौटिल्य (1/19), दक्ष और कात्यायन ने 'दिन और रात्रि' (अहोरात्र) को आठ भागों में बांटा है। दिन और रात्रि के 15 मुहूर्तों का उल्लेख पूर्व में किया गया है।

दिन के आरम्भ के विषय में विभिन्न मत हैं। इसे निम्न क्रम में प्रस्तुत किया जा सकता है–

1.यहूदियों ने दिन का आरम्भ काल सायंकाल से माना है(जेनेसिस – 1/5 और 1/13)।

2. मिस्रवासियों ने सूर्योदय से सूर्यास्त तक के दिन को 12 भागों में बांटा है, उनके घंटे ऋतुओं पर निर्भर थे।

3. बेबिलोनियों ने दिन का आरम्भ सूर्योदय से माना है और दिन तथा रात्रि को 12 भागों में बांटा है, जिनमें प्रत्येक भाग दो विपुवीय घण्टों का होता है।

4. एथेंस और यूनान में ऐतिहासिक कालों में दिन, सामान्यतः पंचांग के लिए सूर्यास्त से आरम्भ होता था।

5. रोम में दिन का आरम्भ आधी रात से होता था।

6. भारतीय लेखकों ने दिनारम्भ सूर्योदय से माना है (ब्राह्मस्फुट सिद्धान्त – 11/33), किन्तु वे दिन के विभिन्न आरम्भों से अनभिज्ञ नहीं थे।

7. पंचसिद्धान्तिका (15/20 और 23) में आया है कि – आर्यभट्ट ने घोषित किया है कि लंका में दिन का आरम्भ अर्द्धरात्रि से होता है किन्तु पुनः उन्होने कहा है कि दिन का आरम्भ सूर्योदय से होता है और लंका का वह सूर्योदय सिद्धपुर में सूर्यास्त से मिलता है, यमकोटि में मध्यान्ह के तथा रोमक देश में अर्द्धरात्रि से मिलता है।

आधुनिक काल में लोक दिन का आरम्भ अर्द्धरात्रि से होता है।

2.सप्ताह – यह पंचांग का दूसरा अंग है। यह केवल मानव निर्मित व्यवस्था है। इसके पीछे कोई ज्योति– शास्त्रीय या प्राकृतिक योजना नहीं है। 'सप्ताह' –व्यवस्था को निम्नक्रम में प्रस्तुत किया जा सकता है–

1.स्पेन आक्रमण के पूर्व मेक्सिकों में पांच दिनों की योजना थी।

2.सात दिनों की योजना यहूदियों, बेबिलोनियों और दक्षिण अमेरिका के इंका लोगों में थी।

3. लोकतान्त्रिक युग में रोमनों में आठ दिनों की व्यवस्था थी, मिस्रियों और प्राचीन अथेनियनों में दस दिनों की योजना थी।

4. ओल्ड टेस्टामेण्ट में आया है कि ईश्वर ने छः दिनों तक स्रष्टि की और सातवें दिन विश्राम करके उसे आशीष देकर पवित्र बनाया (जेनेसिरा 2/1–3)।

5. एक्सोडस (20/8–11, 23/12–14) और डेउटेरोनामी (5/12–15) में ईश्वर ने यहूदियों को छः दिनों तक काम करने का आदेश दिया है और एक दिन (सातवें दिन) आराम करने को कहा है और उसे ईश्वर के सैब्बाथ (विश्रामवासर) के रूप में पवित्र मानने की आज्ञा दी है।

6. यहूदियों ने सैब्बाथ (सप्ताह का अन्तिम दिन) को छोड़कर किसी दिन को नाम नहीं दिया है; उसे वह लोग रविवार न कहकर शनिवार मानते हैं।

उपरोक्त बिन्दुओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि ओल्ड टेस्टामेन्ट में सप्ताह दिनों के नाम (व्यक्तिवाचक) नहीं मिलते। न्यू टेस्टामेण्ट में भी सप्ताह दिन केवल संख्या से ही द्योतित है (मैथ्यू – 28/1, मार्क – 16/1, ल्यूक – 24/1)। सप्ताह में कोई न कोई दिन कतिपय देशों और धार्मिक सम्प्रदायों द्वारा सैब्बाथ (विश्रामदिवस) या पवित्र माना गया है (यथा – सोमवार यूनानी सैब्बाथ दिन, मंगल पारसियों का, बुध असीरियों का, बृहस्पति मिस्रियों का, शुक्र मुसलमानों का, शनिवार यहूदियों का और रविवार ईसाइयों का पवित्र या विश्राम दिन है।)

सात दिनों के वृत्त के उद्भव और विकास का वर्णन ऐफ्0 ऐच0 कोल्सन के ग्रंथ 'दी वीक' में निम्न क्रम में उल्लिखित है –

1.पाम्पेयी ने ई0 पू0 83 में जेरुसलेम पर अधिकार किया, उस दिन यहूदियों का विश्राम दिवस था।

2. डियो ने 'रोमन हिस्ट्री' (जिल्द 3, पृ0 129,131) में यह स्पष्ट किया है कि सप्ताह का उद्गम यूनान में न होकर मिस्र में हुआ, वह भी बहुत प्राचीन नहीं है।

3. पाम्पेयी के नगर में जो सन् 79 ई0 में लावा (ज्वालामुखी) में डूब गया था, एक दीवार पर सप्ताह के छः दिनों का नाम आलिखित है। इससे यह संकेत मिलता है कि सन् 79 ई0 के पूर्व ही इटली में सप्ताह दिनों के नाम ज्ञात थे।

4. मार्टन ने 'हिस्ट्री आफ साइंस' में लिखा है कि यहूदी सैब्बाथ, मिस्री दिन घंटे और चाण्डिया के ज्योतिष ने वर्तमान सप्ताह की सृष्टि की है (पृ0 76–77)। मार्टन महोदय का मत है कि ग्रहीय दिनों का आरम्भ मिस्र और वेबिलोन में हुआ, यूनान में इसका पूर्व ज्ञान नहीं था।

5. आधुनिक यूरोपीय घंटे वेबिलोनी घंटों और मिस्री पंचांग की दिन संख्या पर आधारित हैं।

6. ई0 पू0 दूसरी शती तक यूरोप तथा मध्य एशिया में आज के सप्ताह दिनों के नामों आदि के विषय में कोई ज्ञान नहीं था। टाल्मी ने अपने टेट्राविल्लास में सप्ताह का ज्योतिषीय प्रयोग नहीं किया है।

7. आज के दिनों के नाम ग्रहों पर आधारित हैं (यथा सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र और शनि नामक सात ग्रह)।

उपरोक्त बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए निम्न साप्ताहिक दिनो के आरम्भिक दिन को निम्न क्रम में प्रस्तुत किया जा सकता है –

ग्रहों से सम्बन्धित दिनों में कई कारणों से सप्ताह में प्रथम दिन – रविवार रखा गया है। सम्भवतः उसी दिन स्रष्टि का आरम्भ हुआ है। जिस प्रकार दिनों का क्रम है उसमें ग्रहों की दूरी, गुरुत्व, प्रकाश और विविध महत्ता का कोई समावेश नहीं है।

याज्ञ0 (1/293) ने साप्ताहिक ग्रहों के क्रम को निम्न क्रम में प्रस्तुत किया है – सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु।

सप्ताह दिनों का क्रम मिस्रियों के 24 धंटों वाली तिथि पर आधारित है, जहां प्रत्येक दिन भाग क्रम से एक ग्रह से शासित है। रविवार को प्रथम भाग पर सूर्य का, 21 वें भाग के उपरान्त 22 वें भाग पर पुनः सूर्य का, 23 वें पर कुछ शुक्र का, 24 वें पर बुध का शासन माना जाता है तथा दूसरे दिन 25 वें भाग (या घंटे) को सोमवार कहा जाता है। यदि यह व्यवस्था 24 घंटों और घंटा शासकों पर आधारित है तो वही क्रम लम्बे ढंग से भी हो सकता है। 24 घंटों के स्थान पर 60 भागों (घटिकाओं) में दिन को बांटा जा सकता है। यदि हम चन्द्र से आरम्भ करें और एक घटी (या घटिका) एक ग्रह से समन्वित करें तो 57 वीं घटी चन्द्र की होगी, 58 वीं घटी बुध की, 59 वीं घटी शुक्र की, 60 वीं घटी सूर्य की और सोमवार के उपरान्त दूसरा दिन 'मंगलवार' होगा।

प्राचीन कालों में किसी देश में सप्ताह दिनों में एक के बाद एक दिनों में धार्मिक कृत्य नहीं होते थे। सप्ताह के दिनों के उद्भव और विकास के विषय पर मत मतान्तर है। कतिपय विद्वानों द्वारा यह कहा गया है कि भारतीय सप्ताह दिन भारत के नहीं हैं, सम्भवतः वे चाण्डिया या यूनान के हैं।

इस विषय पर अत्यन्त प्राचीन शिलालेखीय प्रमाण है एरण का स्तम्भ शिलालेख, जो बुधगुप्त (सन् 484 ई0) का है, जिसमें आषाढ़ शुक्ल द्वादशी और बृहस्पति का उल्लेख है। यदि मान लिया जाय कि सप्ताह की धारणा अभारतीय है तो इसके पूर्व कि वह सर्वसाधारण के जीवन में इस प्रकार समाहित हो जाय कि गुप्त सम्राट् अपनी घोषणाओं में उसका प्रयोग करने लगें। यह सच है कि ऐसा होने में कई शतियों की आवश्यकता पड़ेगी।

भारतीय धर्मशास्त्रों में भी सप्ताह दिनों का उल्लेख निम्नक्रम में है –

1.आर्यभट्टीय (दशगीतिका, श्लोक 3) में गुरु दिवस (बृहस्पति) का उल्लेख है।

2. बृहत्संहिता (1/4) में मंगल (क्षितितनय) का उल्लेख है।

3. पंचसिद्धान्तिका (1/8) में सोमदिवस (सोमवार) आया है।

4. बृ0 सं0 (103/61–63) ने रविवार से शनिवार तक के कर्मों का उल्लेख किया है।

5. फिलास्ट्रेटस ने टायना के अपोल्लोनियस (सन् 98 ई0 में मृत्यु) के जीवन चरित में लिखा है कि किस प्रकार भारत में यात्रा करते समय अपोल्लोनियस ने ब्राह्मणों के नेता इर्चुस से 7 अंगूठियां प्राप्त कीं, जिन पर 7 ग्रहों के नाम थे और जिन्हें वह प्रतिदिन एक – एक करके पहनता था। इससे भी यही प्रकट होता है कि ग्रह नाम वाले सप्ताह दिनों का ज्ञान भारतीयों को प्रथम शती में प्राप्त था। अतः ई0 पू0 प्रथम शती और ई0 उपरान्त प्रथम शती के मध्य में भारत के लोग ग्रहीय दिनों से परिचित थे।

7. वैखानस समार्त सूत्र (1/4) और बौधायनधर्म सूत्र (2/5/23) में सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु नामक ग्रहों के नाम आये हैं।

8. आथर्वण वेदांग ज्योतिष (वार प्रकरण , श्लोक 1 से 8) में रविवार से लेकर शनिवार तक के कर्मों का उल्लेख है।

9. याज्ञ0 (1/296) में दिनों और राहु – केतु के साथ नवग्रहों की चर्चा हुई है। यही बात नारदपुराण (1/51/80) में भी है।

उपरोक्त बिन्दुओं के आधार पर यह कहना कि सबसे पहले ग्रहीय आधार पर दिन –सप्ताह की खोज भारतीयों की है या पाश्चात्य देशों की – यह सब अभी भी विवादास्पद बना हुआ है। – यह सब नये सिरे से विद्वतजन के लिए विचारणीय है।

(विशेष – अल्वरुनी (सचौ, जिल्द 1, अध्याय 19, पृ0 214–15) में लिखा है कि – 'भारतीय लोग ग्रहों और सप्ताह दिनों के विषय में अपनी परिपाटी रखते हैं और दूसरे लोगों की परिपाटी को, भले ही वह अधिक ठीक हो; मानने को सन्नद्ध नहीं हैं'।)

3.. **नक्षत्र** –यह पंचांग का तीसरा अंग है। यह 'शब्द' विख्यात 27 तारा – पुंजों का द्योतक है। इसके निम्न तीन अर्थ हैं–

2.1. सामान्य तारागण।

2.2. राशि – चक्र के 27 समान भाग।

2.3. राशि – चक्र के तारा दल ।

उपरोक्त क्रम को ध्यान में रखते हुए नक्षत्र, उनके देवता और लिंगभेद को निम्न सारिणी के अन्तर्गत प्रस्तुत किया जा सकता है –

सारिणी

क्रम संख्या	नक्षत्र	वैदिक देवता	लिंग
1.	कृतिका	अग्नि	स्त्रीलिंग
2.	रोहिणी	प्रजापति	स्त्रीलिंग
3	मृगशीर्ष	सोम	नपुंसकलिंग
4.	आर्दा	रुद्र	स्त्रीलिंग
5.	पुनर्वसु	अदिति	पुलिंग
6.	तिष्य / पुष्य	बृहस्पति	पुलिंग
7.	आश्रेषा / आश्लेषा	सर्पाः	स्त्रीलिंग
8.	मघा	पितरः	स्त्रीलिंग
9.	फाल्गुनी / पूर्वा फाल्गुनी	अर्यमा	स्त्रीलिंग
10.	फाल्गुनी / उत्तरा फाल्गुनी	भग	स्त्रीलिंग
11.	हस्त	सविता	पुलिंग
12.	चित्रा	इन्द्र	स्त्रीलिंग
13.	स्वाती	वायु	स्त्रीलिंग / नपुंसक
14.	विशाखा	इन्द्राग्नी	स्त्रीलिंग
15	अनुराधा	मित्र	स्त्रीलिंग
16.	रोहिणी / ज्येष्ठा	इन्द्र	स्त्रीलिंग
17.	विचृतौ / मूल	पितरः	स्त्रीलिंग
18.	अषाढा / पूर्वा अषाढा	आपः	स्त्रीलिंग
19.	अषाढा / उत्तरा अषाढा	विश्वेदेवाः	स्त्रीलिंग
20.	अभिजित् / अवर्णित	ब्रह्मा	नपुंसकलिंग
21.	श्रोणा / श्रवण	विष्णु	स्त्रीलिंग
22.	श्रविष्ठा / घनिष्ठा	व्सु	स्त्रीलिंग
23.	शतभिषक	इन्द्र	पुलिंग / नपुंसक
24	प्रोष्ठपदा / पूर्वा भाद्रपदा	. अज (एकपाद)	पुलिंग
25.	प्रोष्ठपदा / उत्तरा भाद्रपदा	अहिर्बुध्निय	पुलिंग
26.	श्रेवती	पूषा	स्त्रीलिंग
27	अश्वयुजौ / अश्विनी	अश्विनी कुमार	पुलिंग
28.	अपभरणी / भरणी	यम	स्त्रीलिंग

. सिइयू के चीनी सिद्धान्त में पहले 24 नक्षत्र थे जो आगे चलकर ई0 पू0 1000 (थिबो, गुण्ड्रस, पृ0 13) में 28 हो गये। वैदिक ग्रंथों में 24 नक्षत्रों की कोई चर्चा नहीं है।

वैदिक काल में कोई व्यक्ति किसी निर्दिष्ट नक्षत्र में अग्नि प्रज्वलित किए बिना कोई यज्ञ नहीं कर सकता था। माघ, फाल्गुन और चैत्र आदि मासों के नाम नक्षत्रों के आधार पर ही बने, और यह बात संस्कृत भाषा में ही पायी जाती है; यूनानी, लैटिन या चीनी भाषा में नहीं। नक्षत्रों के देवता गण वैदिक हैं, उनके बेबिलोनी या चीनी नाम नहीं पाये जाते। बेबिलोन में जो आलेख प्राप्त हुए हैं उनमें नक्षत्रों की गणना वैसी नहीं है जैसी कि हम वैदिक साहित्य में पाते हैं।

तैत्तिरीय संहिता और तै0 ब्रा0 के बहुत पहले से वैदिक विज्ञ लोगों ने नक्षत्रों की संख्या (27 या 28) निश्चित कर ली थीं । नक्षत्र और उनका नाम और उससे सम्बन्धित देवताओं आदि के क्रम यज्ञिय कृत्य में समाहित हो चुके थे।

अधिकांश नक्षत्रों के नाम महत्वपूर्ण हैं और उनके साथ अनुश्रुतियां निम्न क्रम में बधीं हैं –

1.आर्द्रा नक्षत्र – इसका अर्थ है – भींगा हुआ। यह नक्षत्र 'आर्द्रा' नाम से इसलिए प्रख्यात हुआ क्योंकि जब सूर्य इसमें अवस्थित हो तो वर्षा आरम्भ हो जाती है। .

2. पुर्नवसु नक्षत्र – इसका नाम इसलिए पड़ा कि धान और जौ के अनाज जो भूमि पर पड़े थे, अब नये धान / जौ के रूप में अंकुरित हुए।

3. पुष्य नक्षत्र – इसका नाम इसलिए पड़ा कि नये अंकुर बढ़े और फलित – पोषित हुए।

4. आश्रेषा / आश्लेषा नक्षत्र – इसका नाम इसलिए पड़ा कि धान और जौ के पौधे इतने बढ़ गये कि वह एक दूसरे का आलिंगन करने लगे।

5. मघा नक्षत्र – इसका नाम इसलिए पड़ा कि धान या अन्य पौधे खड़े अन्नों के रूप में हो गये, जो स्वयं धन हैं।

6. कृतिका नक्षत्र – इसका नाम इसलिए पड़ा कि वे (6/7) चितकबरे मृगचर्म के समान हैं, जिस पर वेदाध्ययन के लिए विज्ञजन आसन जमाते थे।.....

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यह कैसे कहा जा सकता है कि भारतीयों पर नक्षत्र सम्बन्धी बाहरी ऋण है।

4. योग –यह पंचांग का चौथा अंग है। यह सूर्य और चन्द्र के रेखांशों के योग से (या यह वह काल है जिसमें सूर्य और चन्द्र देश के 13 अंश और 20 कला पूर्ण करते हैं) माना जाता है। जब योग 13.20 अंशों का होता है उस समय विष्कम्भ योग का अन्त होता है; जब वह 26.40 अंशों का होता है, तो प्रीति योग का अन्त होता है। योग 27 है और 360 अंश बनाते हैं। रत्नमाला (4 / 1 – 3) में निम्न प्रकार के योग हैं –

क्रम संख्या	नाम	देवता	क्रम संख्या	नाम	देवता
1.	विष्कम्भ	यम	15.	वज्र	वरुण
2.	प्रीति	विष्णु	16.	सिद्धि	गणेश
3.	आयुष्मान	चन्द्र	17.	व्यतीपात	शिव
4.	सौभाग्य	ब्रह्मा	18.	वरीयान	कुबेर
5.	शोभन	बृहस्पति	19.	परिधि	विश्वकर्मा
6.	अतिगण्ड	चन्द्र	20.	शिव	मित्र
7.	सुकर्मा	इन्द्र	21.	सिद्ध	कार्तिकेय
8.	धृति	आपः	22.	साध्य	सावित्री
9.	शूल	सर्प	23.	शुभ	कमला
10.	गण्ड	अग्नि	24.	शुक्ल	गौरी
11.	वृद्धि	सूर्य	25..	ब्रह्म	अश्विनी
12.	ध्रुव	पृथिवी	26.	ऐन्द्र	पितरगण
13.	व्याघात	पवन	27.	वैधृति	टदिति
14.	हर्षण	रुद्र			

उपरोक्त को नित्य योग कहा जाता है। मुहूर्त दर्शन (2 / 16) के मत से इन 27 योगों में 9 निन्द्य हैं; (यथा – परिध, व्यतीपात, वज्र, व्याघात, वैधृति, विष्कम्भ, शूल, गण्ड और अतिगण्ड)। 'रत्नमाला' में कहा गया है कि व्यतीपात और वैधृति पूर्णरूपेण अशुभ है, परिध का पूर्वाद्ध और अशुभ नाम वाले योगों का प्रथम पाद अशुभ है; सभी शुभ कृत्यों में विष्कम्भ और वज्र की तीन घटिकाएं, व्याघात की 9, मूल की 5, गण्ड और अतिगण्ड की 6 घटिकाएं वर्जित हैं।

याज्ञ0 (1 / 218) में व्यतीपात योग का उल्लेख है। हर्षचरित (उच्छवास – 4) में वाण ने कहा है कि जब हर्ष का जन्म हुआ तब व्यतीपात जैसे दोषों से दिन रहित था। सामान्यतः वर्ष में 13 (कभी – कभी 14) व्यतीपात योग होते हैं और 96 श्राद्धों में 13 व्यतीपाती के श्राद्ध सम्मिलित हैं।

उपरोक्त 27 योगों के अतिरिक्त कुछ और भी योग हैं जो किन्हीं तिथियों के साथ किन्हीं सप्ताह दिनों के संयुक्त होने से उत्पन्न होते हैं या कि जब कोई ग्रह किन्हीं विशिष्ट राशियों में किन्हीं विशिष्ट तिथियों या नक्षत्रों में बैठ जाते हैं।

कपिलाषष्ठी और अर्थोदय इसी प्रकार के योग हैं।

व्यतीपात, जो 27 योगों में 17 वां है, निम्न दो अर्थों में प्रयुक्त होता है –

1. जब अमावस्या रविवार को पड़ती है और चन्द्र, श्रवण, अश्विनी, घनिष्ठा, आर्द्रा और आश्लेषा नक्षत्रों में किसी के प्रथम पाद में रहता है।

2. जब शुक्ल पक्ष की द्वादशी को बृहस्पति और मंगल सिंह राशि में हो, सूर्य मेष में और जब वह तिथि हस्त नक्षत्र में हो।

(विशेष – 1. इन दोनों को कभी – कभी महाव्यतीपात कहते हैं।

विशेष – 2. इन दोनों पर दान करने की व्यवस्था दी गई है।)

इन 27 योगों के अतिरिक्त बहुत से योगों का उल्लेख पंचांगों में होता है; (यथा – अमृतसिद्धि, यमघण्ट, दग्धयोग, मृत्युयोग, धवाण आदि)।

5. करण – यह पंचांग का पांचवां अंग है। तिथि का अर्द्ध करण होता है, अतः एक तिथि में दो करण तथा एक चान्द्र मास में 60 करण होते हैं। करण के दो प्रकार हैं – चर और स्थिर। बृ0 सं0 (99 / 1 – 2) में देवता – नाम के साथ 7 चर करण निम्न है –

1. भव – इन्द्र, / 2. बालव – ब्रह्मा,/ 3. कौलव – मित्र,/ 4. तैतिल – अर्यमा, /5. गर (या गज) – पृथिवी,/ 6. वणिज – श्रीं, / 7. विष्टि – यम।

देवता – नाम के साथ चार स्थिर करण निम्न हैं –

1. शकुनि – कलि, /2. चतुष्पाद – वृष, /3. नाग – सर्प,/ 4. किंस्तुघ्न – वायु।

'करण' शब्द 'कृ' धातु से बना है, यह तिथि को दो भागों में करता है, अतः यह 'करण' कहा गया है।

बहुत से करणों के नाम विचित्र हैं, उनके अर्थ का बोध नहीं हो पाता।

धर्मशास्त्र के मध्यकाल के लेखकों के मन में विष्टि नामक सातवें करण ने दारुण भय उत्पन्न कर दिया है। यह द्रष्टव्य है कि यदि चन्द्रमास की तिथियों को 60 भागों में बांटा जाय और अमान्त मास की प्रतिपदा के दूसरे अर्ध में बव का आरम्भ हो तो विष्टि एक मास में आठ बार आयेगी, जैसा कि निम्न तालिका में व्यक्त है –

करण	1	2	3	4	5	6	7	8
बव	2	9	16	23	30	37	44	51
बालव	3	10	17	24	31	38	45	52
कौलव	4	11	18	25	32	39	46	53
तैंतिल	5	12	19	26	33	40	47	54
गर	6	13	20	27	34	41	48	55
वणिज	7	14	21	28	35	42	49	56
विष्टि	8	15	22	29	36	43	50	57

इनमें स्थिर करण होंगे – शकुनि –58, चतुष्पाद – 59, नाग – 60 और किंस्तुम्न – 1 (आगे के मास के प्रथम पक्ष की प्रतिपदा)।

करणों के विषय में, विशेषतः विष्टि के विषय में (जो मास में आठ बार होती है) जो कहा गया है कि यह भुजंग के आकार की है, दारुण है, आदि।

आधुनिक काल में ज्योतिषियों के मुख्यतः तीन सम्प्रदाय हैं – 1. सौर सिद्धान्त (सौर पक्ष) का सम्प्रदाय, 2. ब्रह्म सिद्धान्त (ब्राह्म पक्ष) का सिद्धान्त, 3. आर्य सिद्धान्त (आर्यपक्ष) का सिद्धान्त। इन सब के अन्तर में निम्न दो बातें प्रमुख हैं –

1. वर्ष का मान (विस्तार), और 2. महायुग जैसी किसी विशिष्ट कालावधि में सूर्य, चन्द्र और ग्रहों के भ्रमणों की संख्या। वर्ष के विस्तार का अन्तर इन सिद्धान्तों में बहुत अल्प है; यथा – कुछ विपल।

(विशेष – 1. एक विपल – 1 / 60 पल, एक पल – 1 / 60 घटिका, एक घटिका – 24 मिनट।

विशेष – 2. सूर्य सिद्धान्त के अनुसार – वर्ष विस्तार में 365 दिन, 15 घटिकाएं और 31.523 पल हैं, किन्तु वासन्तिक विषुव तक सूर्य के दोनों अयनों के बीच की अवधि है – 365 दिन, 14 घटिकाएं और 31.972 पल तथा नाक्षत्र वर्ष में 365 दिन, 15 घटिकाएं, 22 पल और 53 विपल पाये जाते हैं।)

भारतीय पंचांग से सम्बन्धित उसके पांचों अंगों की उपरोक्त क्रम में आवश्यक चर्चा करने के उपरान्त, 'पंचांग' का ऐसा रूप/स्वरूप निर्मित करना अति आवश्यक है जो मानव सम्बन्धी अधिकांश 'धार्मिक/आध्यात्मिक' जन समस्याओं के लिए उपयोगी सिद्ध हो सके। इस विवादास्पद कार्य को आरम्भ करने से पूर्व सन् 1952 में 'मेघनाथ साहा' के निम्न संक्षिप्त वक्तव्य और अवधारणा पर भी विचार कर लेना आवश्यक है –

सन् 1952 (नवम्बर) में शासन की ओर से डा0 मेघनाथ साहा की अध्यक्षता में 'पंचांग सुधार समिति' बनीं, जिस पर सारे भारत के लिए एक पंचांग बनाने का भार सौंपा गया।

उस समिति ने नवम्बर 1955 में अपना निष्कर्ष उपस्थित किया। वह निष्कर्ष लोक पंचांग और धार्मिक पंचांग रिपोर्ट (पृ0 6 – 8) में अंकित है।

स्वतन्त्र भारत के प्रशासन द्वारा सबके लिए समान पंचांग की व्यवस्था की जानी चाहिए।

लोक पंचांग के लिए समिति द्वारा निम्न निष्कर्ष दिये गये हैं –

1. शक संवत् का प्रयोग होना चाहिए (शक संवत् 1886 सन् 1964 – 65 ई0 के बराबर है)।

2. वर्ष का आरम्भ वासन्तिक विषुप के अगले दिन से होना चाहिए।

3. सामान्य वर्ष में 365 दिन हों, किन्तु प्लुत (लीप) वर्ष में 366 दिन हों। शक संवत् में 78 जोड़ने पर यदि 4 से भाग लग जाय तब वह प्लुत वर्ष माना जायेगा। किन्तु जब योग में 100 का भाग लग जाय तो जब उसमें 400 से भाग लगेगा तभी प्लुत वर्ष माना जायेगा, अन्यथा वह सामान्य वर्ष ही समझा जायेगा।

4. चैत्र (या छैत्र) वर्ष का प्रथम मास होगा और मासों के दिन निम्न प्रकार से होंगे –

क्रम संख्या	मास का नाम	दिन	क्रम संख्या	मास का नाम	दिन
1.	चैत्र	30 दिन (या 31 दिन–प्लुत वर्ष)	7.	आश्विन	30 दिन
2.	वैशाख	31 दिन	8.	कार्तिक	30 दिन
3.	ज्येष्ठ	31 दिन	9.	मार्गशीर्ष	30 दिन
4.	आषाढ़	31 दिन	10.	पौष	30 दिन
5.	श्रावण	31 दिन	11.	माघ	30 दिन
6.	भाद्रपक्ष	31 दिन	12.	फाल्गुन	30 दिन

संशोधित भारतीय पंचांग के दिनांक ग्रेगांरी पंचांग के दिनांकों की संगति में है। दिनांकों का क्रम निम्न प्रकार है –

क्रम संख्या	भारतीय पंचांग	ग्रेगांरी पंचांग	क्रम संख्या	भारतीय पंचांग	ग्रेगांरी पंचांग
1.	चैत्र – 1	मार्च–22 / 21 (सामान्य / लीपवर्ष)	7.	आश्विन	सितम्बर – 23
2.	वैशाख – 1	अप्रैल – 21	8.	कार्तिक	अक्टूबर – 23
3.	ज्येष्ठ – 1	मई – 22	9.	मार्गशीर्ष	नवम्बर – 22
4.	आषाढ़ – 1	जून – 22	10.	पौष	दिसम्बर – 22
5.	श्रावण – 1	जुलाई – 23	11.	माघ	जनवरी – 21
6.	भाद्रपक्ष – 1	अगस्त – 23	12.	फाल्गुन	फरवरी – 20

संशोधित पंचांग के अनुसार – भारतीय ऋतुक्रम निम्न होगा –

क्रम संख्या	भारतीय ऋतु	ऋतु मास	क्रम संख्या	भारतीय ऋतु	ऋतु मास
1.	ग्रीष्म	वैषाख और ज्येष्ठ	4.	हेमन्त	कार्तिकऔरमार्गशीर्ष
2.	वर्षा	आषाढ़और श्रावण	5.	शिशिर	पौष और माघ

3.	शरद्	भाद्रपदऔरआश्विन	6.	वसन्त	फाल्गुन और चैत्र

धर्मिक पंचांग के विषय में निम्नांकित निष्कर्ष है –

1. सौर मासों की गणना, जो उसी नाम वाले मासों की जानकारी के लिए आवश्यक है, वासन्तिक विषुप से 23 अंश और 15 कला (निश्चित अयनांश) पहले ही की जायेगी।

इस प्रकार मासों का आरम्भ निम्न रूप से होगा – सौर वैसाख सूर्य के 23 ^{0} 15 ′ रेखांश से आरम्भ होगा, सौर ज्येष्ठ और चैत्र तक अन्य सौर मास क्रम से निम्न होंगे–

'53^{0} 15′, 83^{0} 15′, 113^{0} 15′, 143^{0} 15′, 173^{0} 15′, 203^{0} 15′, 233^{0} 15′, 263^{0} 15′, 393^{0} 15′, 323^{0} 15′, 353^{0} 15′,।

यह केवल समझौता मात्र है, जिससे परम्परा अचानक उखड़ न जाय। इससे अतिपूर्व (कालिदास और वराहमिहिर का समय काल) और वर्तमान काल की ऋतुओं में समानता नहीं पायी जा सकेगी।

2. धार्मिक उपयोगों के लिए चान्द्र मास प्रतिपदा से आरम्भ होंगे और उस सौर मास के, जिसमें प्रतिपदा पड़ती है, नाम से पुकारे जायेंगे। यदि सौर मास में दो प्रतिपदाएं पड़ जायेंगी तो प्रथम प्रतिपदा से आरम्भ होने वाला चान्द्र मास अधिक या मलमास कहलायेगा और दूसरी प्रतिपदा से आरम्भ होने वाला चान्द्र मास शुद्ध या निज मास कहलायेगा।

3. 13^{0} 20′ नक्षत्र भाग से चन्द्र के आगे चले जाने या अन्त का क्षण या उससे सूर्य का प्रवेश परिवर्तित अयनांश से गणित किया जायेगा। इस अयनांश का मूल्य (मान) 21 मार्च 1956 में 23^{0} 15′ 0′′ था। इसके उपरान्त यह क्रमशः बढ़ता गया है जिसका मध्यम मान लगभग 50^{0} 27′′ है।

4. दिन की गणना अर्धरात्रि से अर्धरात्रि तक होगी (82.5^{0} पूर्व रेखांश और 23^{0} 11′ उत्तरी अक्षांश के मध्य से) किन्तु यह लोक दिन है। धार्मिक उपयोगों में सूर्योदय से ही दिन की गणना होगी।

5. गणनाओं के लिए सूर्य और चन्द्र के रेखांशों का ज्ञान उनकी गतियों के समीकरणों से किया जाय, जिसके निरीक्षित मूल्यों से संगति बैठती रहे।

6. भारतीय पंचांग और नौ (नाविक) पंचांग का निर्माण होते रहना चाहिए, जिससे सूर्य, चन्द्र, ग्रहों तथा अन्य आकाशीय पिण्डों के स्थानों का अग्रिम ज्ञान होता रहे।

'पंचांग सुधार समिति' के उपरोक्त निर्णययुक्त सुक्षाओं का भारत के अधिकांश पंचांगों में समावेश नहीं हो पाया है। हो सकता है इन सबके पीछे वैज्ञानिक और धार्मिक

मान्यताएं किसी न किसी रूप में आड़े हाथ आती हों। लेकिन इतना तो अवश्य है कि भारत के विविध क्षेत्रों से सम्बद्ध पंचांगों में इतनी विविधता है जिसे नये सिरे से समायोजित करके सार्वभामिक क्रम में समरूपता के एक नये क्रम से जोड़ा जाय। इसमें दो राय नहीं है कि पंचांग के नये क्रम में उससे सम्बन्धित पांचों अंग कुछ न कुछ अवश्य प्रभावित होंगे। इन सब पर निम्न क्रम में नये सिरे से विचार किया जा सकता है –

1. दिन की गणना अर्धरात्रि (मध्यरात्रि) से अर्धरात्रि (मध्यरात्रि) तक होगी (82.5^0 पूर्व रेखांश और 23^0 11′ उत्तरी अक्षांश के मध्य से) किन्तु यह लोक दिन है। धार्मिक उपयोगों में सूर्योदय से सूर्योदय तक ही दिन की गणना होगी।

(विशेष –1: सनातनी परम्परा में कतिपय 'अनुष्ठान/पुरश्चरण' रात्रि के महाकाल से सम्बद्ध होता है। उसे सही ढंग/क्रम से सम्पन्न करने के लिए साधक/व्यक्ति को दिन की गणना अर्धरात्रि (मध्यरात्रि) से अर्धरात्रि (मध्यरात्रि) तक ही करनी चाहिए।

विशेष –2: 'व्रत/उपवास' आदि के लिए साधक/व्यक्ति को सूर्योदय से सूर्योदय तक ही दिन की गणना करनी चाहिए।)

2. ग्रह, नक्षत्र और दिन के सापेक्ष में, जो तीन वर्ष में एक माह के 'मलमास' की व्यवस्था विविध पंचांगों में दी गयी है उसे वार्षिक/मासिक क्रम में समायोजित कर लेना चाहिए। इससे विविध भौतिक/धार्मिक कार्यों को लेकर लोगों का समय बचेगा और अतिरिक्त समय/काल का कम से कम दुरुपयोग होगा।

3. प्रतिपदा से अमावस्या और प्रतिपदा से पूर्णिमा के मध्य क्षय तिथियों पर पुनः विचार करना चाहिए और उस माह से सम्बन्धित अधिक समय को उसमें समायोजित करने के लिए इस प्रकार सोचना चाहिए जिससे 'ग्रह, नक्षत्र और अमुक तिथि' पर विशेष 'प्रभाव/कुप्रभाव' न पड़े।

4. चन्द्रगहण और सूर्य ग्रहण को लेकर स्थान और काल के सापेक्ष में विवेचना आवश्यक है। पंचांग में लोगों को भ्रमित करने का प्रयास नहीं होना चाहिए।

5.ग्रह(7–9),नक्षत्र (27–28) और पृथिवी के मध्य स्थित और गतिशील गुरुत्वाकर्षण में निरंतर कुछ न कुछ परिवर्तन हो रहा है। इन सबके सापेक्ष में विविध पंचागों में भी यथासम्भव परिवर्तन होना चाहिए।

उपरोक्त बिन्दुओं के सापेक्ष में, पूरे भारत में एक या दो ऐसा पंचांग होना चाहिए जो अधिकांश लोगों के लिए हर तरह से ग्राह्य हो।

0